★ श्रीहरिः शरणम् ★

वर-वधू को आशीर्वचन

मेरे निज स्वरूप प्रिय वत्स तथा स्नेहमयी दुलारी बेटी

तुम दोनों को बहुत-बहुत प्यार तथा बहुत-बहुत मधुर स्नेह

बड़े हर्ष की बात है कि तुम दोनों ब्रह्मचर्य व्रत को पूरा कर सद्गृहस्थ होने जा रहे हो । गृहस्थाश्रम जीवन का द्वितीय भाग है। इस आश्रम में न्यायोपार्जित अर्थ, सर्वहितकारी कार्य तथा नियमानुसार सन्तान उत्पन्न कर पितृ-ऋण से मुक्त होना अनिवार्य है अर्थात् अर्थ तथा काम के राग से रहित होने के लिए गृहस्थाश्रम साधन रूप है; अथवा यों कहो कि गृहस्थाश्रम वानप्रस्थ की तैयारी है। प्राकृतिक नियमानुसार एक साधन की पूर्णता में दूसरे साधन की अभिव्यक्ति स्वतः होती है। अतः गृहस्थाश्रम की पूर्णता में ही वानप्रस्थ आश्रम की उत्पत्ति निहित है ।

जब मानव अर्थ और काम के विद्यमान राग को विचारपूर्वक नहीं मिटा पाता, तब उसे अर्थ और काम की वास्तविकता को जानने के लिए ब्रह्मचर्य आश्रम से गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करना अनिवार्य होता है। कारण कि कुछ कामनायें ऐसी होती हैं जिनकी पूर्ति में ही निवृत्ति की रुचि जागृत होती है। उन्हीं कामनाओं को विधिवत पूरा करने के लिए पाणिग्रहण-संस्कार द्वारा गृहस्थ होने का विधान है। गृहस्थाश्रम में इन्द्रिय-लोलुपता से जितेन्द्रियता, स्वार्थ-भाव से सेवा-भाव एवं विषय-चिन्तन से सार्थक-चिन्तन की ओर उत्तरोत्तर अग्रसर होना परम आवश्यक है; अर्थात् कामनापूर्ति का अन्त कामना-निवृत्ति में होना चाहिए, नवीन कामनाओं को जन्म देने में नहीं। यह तभी सम्भव होगा जब कामनाओं में प्रवृत्त होने से पूर्व ही मानव जीवन के वास्तविक उद्देश्य को विवेकपूर्वक भली भाँति जान लिया जाय।

दाम्पत्य जीवन में परस्पर स्नेह एवं विश्वास को सुरक्षित रखना सफलता की कुंजी है। उसके लिए तुम दोनों को अनुकूलता की दासता और प्रतिकूलता के भय का अन्त करना होगा। **अनुकूलता उदारता का और प्रतिकूलता त्याग का पाठ पढ़ाने के लिए आती है।** उदारता से सुख भोग की रुचि का नाश हो जाता है तथा त्याग से दुःख का भय स्वतः मिट जाता है जो उन्नति का मूल है। सुख की दासता तथा दुःख का भय मिटते ही मानव बड़ी ही सुगमतापूर्वक परस्पर एक दूसरे की निर्बलताओं को निभा लेता है, जिससे परस्पर में उत्तरोत्तर स्नेह की वृद्धि होती रहती है। **स्नेह वह अलौकिक तत्व है जो स्वभाव से ही दूरी तथा भेद का अन्त कर देता है।** अतः स्नेह सुरक्षित रखने के लिए ही मानव जीवन मिला है।

प्रेम वह गणना है जिसमें एक और एक मिलकर एक होते हैं, दो नहीं। प्रेम वह ऐनक है जिसके लगाने पर प्रेमी को सर्वत्र अपने प्रेमास्पद का ही दर्शन होता है। अतः प्रेम का सम्पादन करने के लिए आवश्यक कामना की पूर्ति कामना की निवृत्ति के लिए ही है। उसी मूल मन्त्र को समझाने के लिए पाणिग्रहण-संस्कार में वर-वधू परस्पर में कंगन की गांठ खोलते हैं। इस प्रथा का बाह्य रूप तो अब भी प्रचलित है, पर उसके वास्तविक अर्थ पर ध्यान नहीं दिया जाता। कंगन की गांठ खोलते समय इस बात पर विशेष ध्यान रखा जाता है कि गांठ खुल जाय, टूटे नहीं। वर वधू के कंगन की गांठ खोलता है और वधू वर के कंगन की गांठ खोलती है। इससे यह समझना चाहिए कि वर वधू के राग निवारण में और वधू वर की राग निवृत्ति में पूरा-पूरा सहयोग देने का प्रयास करेंगे। यह सभी जानते हैं कि संयोग किया जाता है और वियोग स्वतः होता है। जो किया जाता है उसमें ही मानव को सावधान रहना है। संयोग काल में भले ही **वर-वधू देखने में दो प्रतीत होते हों, पर वास्तव में तो दोनों को एक होना है।** जिस प्रकार चावल से छिलका मिले रहने पर ही धान का विकास होता है, उसी प्रकार वर-वधू के एक होने में दोनों का विकास निहित है। इसी रहस्य को समझाने के लिए धान बोने की प्रथा है।

समस्त कर्त्तव्यों का परिणाम राग-निवृत्ति है और राग-निवृत्ति का फल अनुराग के उदय होने में है। जीवन की पूर्णता प्रेम में निहित है। कारण कि प्रेम की अभिव्यक्ति में ही अगाध-अनन्त रस की उपलब्धि होती है जो वास्तविक जीवन है। प्रीति को सुरक्षित रखने के लिए तुम दोनों को एक दूसरे के मन की वह बात जो विवेक विरोधी नहीं है, सदैव करनी है। **अपना मन देने पर ही दूसरे का मन अपना मन हो जाता है।** जो प्राणी अपने ही मन की बात पूरी करना चाहते हैं, वे कभी प्रीति का सम्पादन नहीं कर सकते और प्रीति के बिना नीरसता का नाश नहीं हो सकता। **तुम दोनों को प्रत्येक दशा में निज विवेक का आदर करना है,** क्योंकि विवेक के आदर में ही कर्त्तव्य का ज्ञान, वस्तुओं के स्वरूप का ज्ञान और वस्तुओं से सम्बन्ध–विच्छेद करने की सामर्थ्य निहित है। वस्तुओं की ममता का अन्त होते ही समस्त विकार अपने आप मिट जाते हैं और प्राप्त परिस्थिति के सदुपयोग करने की सामर्थ्य स्वतः आ जाती है जो विकास का मूल है।

सर्व समर्थ प्रभु, तुम दोनों को बल का सदुपयोग तथा विवेक का आदर करने की सामर्थ्य प्रदान करें-यही मेरी सद्भावना है। पुनः तुम दोनों को बहुत-बहुत प्यार।

ॐ आनन्द ! ॐ आनन्द ! ॐ आनन्द !

तुम्हारा

शरणानन्द

मानव सेवा संघ, वृन्दावन

थोड़ी-थोड़ी देर में कहते रहो –
हे मेरे नाथ ! मैं आपको भूलूँ नहीं
website - www.swamiramsukhdasji.org